315hi15

15

18वीं शताब्दी में भारत की स्थिति

18वीं शताब्दी में भारत में दो महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए, जिन्होंने सता के ढांचे को पूरी तरह बदल दिया तथा बहुत से महत्त्वपूर्ण सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तनों की शुरूआत की। पहला शताब्दी के पूर्वार्द्ध में मुगल साम्राज्य से क्षेत्रीय शक्तियों में सत्ता हस्तांतरण तथा दूसरा राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक क्षेत्र में आए परिवर्तन। 18वीं शताब्दी में अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी अपनी राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा के लिए मौके की तलाश में थी। मुगल सत्ता के पतन ने कई क्षेत्रीय शक्तियों को जन्म दिया। इस अध्याय में हम देश में इन्हीं क्षेत्रीय शक्तियों के उदय का अध्ययन करेंगे। आक्रामक ब्रिटिश नीतियों ने आर्थिक स्थिति को प्रभावित किया। क षि तथा गैर क षि उत्पादन में भी बदलाव आया। वाणिज्यिक गतिविधियां भी अछूती न रह सकीं। 18वीं शताब्दी की सामाजिक तथा आर्थिक स्थितियों की चर्चा भी की जाएगी।

उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात आपः

- मुगल साम्राज्य के पतन के कारण तथा क्षेत्रीय शक्तियों को उदय की व्याख्या कर सकेंगे;
- इस अवधि के दौरान उदय हुई मुख्य राजनीतिक शक्तियां का ब्यौरा दे सकेंगे;
- इस अवधि के दौरान भारतीय अर्थव्यवस्था में क्षेत्रीय भिन्नताओं का अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे;
- समाज और संस्क ति की मुख्य विशेषताओं को पहचान सकेंगे; और
- 18वीं शताब्दी के भारत के मुख्य मुद्दों का आकलन कर सकेंगे।

15.1 मुगल साम्राज्य का पतन

भूमिका

मुगल साम्राज्य की एकता तथा सुदढ़ता औरंगजेब के लंबे तथा मजबूत शासन के दौरान ही विखंडित होने लगी थी। हालांकि कुछ झटकों तथा विकट स्थितियों के

बावजूद मुगल प्रशासन काफी सक्षम था तथा उसकी मत्यु के समय 1707 ई० तक मुगल सेना भी काफी मजबूत स्थिति में थी। इस वर्ष को आम तौर पर महान मुगल तथा लघु मुगलों के काल में अंतर स्पष्ट करने के लिए किया जाता है। औरंगजेब की मत्यु के पश्चात मुगल सत्ता कमजोर हो गई तथा अपने विशाल साम्राज्य के हर हिस्से पर नियंत्रण स्थापित करने की शक्ति अब उसमें न रही। फलतः कई क्षेत्रीय सूबेदारों ने अपनी सत्ता का दावा करना प्रारंभ कर दिया। नतीजतन कई मुगल सुबेदारों ने खुद को स्वतंत्र घोषित कर दिया। कुछ नए क्षेत्रीय समूह भी उभरे तथा संगठित हुए तथा इन्हीं घटनाओं के बीच राजनीतिक शक्ति बनकर उभरे। 1707 से लेकर पानीपत के ततीय युद्ध 1761 ई. (जिसमें अहमद शाह अब्दाली ने मराठा शासकों को पराजित किया) तक की अवधि क्षेत्रीय शक्तियों के पुनः उदय की साक्षी बनी, जिसने राजनीतिक तथा आर्थिक विकेन्द्रीकरण व्यवस्था को जन्म दिया। इसी समय तमाम राजनीतिक तथा सैन्य उठापठक के बावजूद स्थानीय कच्चा माल, हस्तशिल्प तथा अनाजों के क्षेत्रीय तथा अंतर्क्षेत्रीय व्यापार ने राजनीतिक व सैन्य संबंधों पर गौर किए बिना आर्थिक परस्पर निर्भरता के प्रगाढ़ रिश्तों का निर्माण किया।

मुगल साम्राज्य का समापन

सन 1707 ई. में जब औरंगजेब की म त्यु हुई, तब क्षेत्रीय शक्तियों से गंभीर चुनौतियां मिलना प्रारंभ हो गया था, जिसने समस्याओं को साम्राज्य के ठीक केन्द्र में बलपूर्वक प्रकट करना शुरू किया। नए शासक बहादुर शाह प्रथम (उर्फ शाह आलम, 1707–12) ने समझौते की नीति अपनाई, उसने उन सभी दरबारियों को माफ कर दिया, जिन्होंने उसके विद्रोहियों का साथ दिया था। उसने उन्हें समुचित क्षेत्र तथा पद प्रदान किए। उसने ज़जिया हालाँकि नहीं हटाया परंतु एकत्र करने का अधिक प्रयत्न भी नहीं किया। आरंभ मे उसने राजस्व राजपूत क्षेत्र के आमेर (वर्तमान जयपुर) तथा जोधपुर के राजा पर नियंत्रण स्थापित करने का प्रयास किया था। जब उसके प्रयासों का विरोध होने लगा तो उसने उनके साथ समझौते की आवश्यकता का अनुभव किया। हालांकि यह समझौता भी उन्हें मुगलों के प्रति कटिबद्ध योद्धा न बना सका। मुगल बादशाह की मराठों के प्रति नीति भी आधी–अधूरी समझौतावादी ही थी। मराठा आपस में तथा मुगलों से संघर्ष करने में ही उलझे रहे। बहादुरशाह हालांकि दक्कन में बुंदेला प्रमुख छत्रसाल तथा जाट सरदार चूड़ामन के साथ समझौता करने में सफल रहा, जिसमें जाट प्रमुख ने सिक्खों के विरुद्ध अभियान में उसकी सहायता की थी।

जहाँदार शाह (1712-1713) बेहद ही कमजोर तथा अयोग्य शासक था। उसके वजीर जुल्फकार खान ने साम्राज्य चलाने की शक्तियां हथिया लीं। जुल्फकार ने महसूस किया कि शासन संचालन के लिए राजपूतों तथा मराठों के साथ मित्रतापूर्ण संबंध बनाए रखने में ही भलाई है शासन की सलामती के लिए हिन्दू प्रमुखों के साथ समझौता अनिवार्य है। उसने औरंगजेब की नीतियों को उलट दिया। घ णास्पद ज़जिया कर हटा दिया गया, उसने सिक्खों के खिलाफ दबाव वाली नीति का ही अनुसरण किया। उसका लक्ष्य उन सभी शक्तियों के साथ सुलह करना था, जो मुगल संस्थागत ढांचे में सत्ता बांटना चाहती थी। जुल्फिकार ने आर्थिक व्यवस्था में सुधार के भी कई प्रयास किए।

वह राज्य में राजस्व संचरण में व द्धि करने के प्रयास में असफल रहा। जब कत्ल किए गए राजकुमार अजीमुशशान के पुत्र फारुख/सियार ने जहांदार शाह तथा जुल्फिकार

खान को बंगाल तथा बिहार से लाए अपार धन तथा विशाल सेना के साथ ललकारा तो मुगल शासकों ने अपनी तिज़ोरी को एकदम खाली पाया। निराशा में उन्होंने अपने ही महल की लूटपाट की, यहां तक कि छत दीवारों से सोने चांदी को नोच लिया जिससे विशाल सेना का खर्च वहन कर सकें। फारुख/सियार (1713-19) ने विजय हासिल की तथा सैय्यद बंधुओं अब्दुल्लाखान हुसैन अली खान बरहा को उच्च पद प्रदान किए। सैय्यद बंधुओं ने वजीर तथा मुख्य बक्शी की उपाधि धारण की तथा शासन के कामकाज पर नियंत्रण स्थापित किया। उन्होंने जुल्फकार की नीतियों को ही आगे बढ़ाया। ज़जिया तथा अन्य अलोकप्रिय कर तत्काल हटा दिए गए। सैय्यद बंधुओं ने सिक्ख विद्रोह को निर्णायक रूप से दबा दिया वही राजपूत, मराठों तथा जाटों के साथ सुलह समझौते का प्रयत्न किया गया। हालांकि सम्राट एवं वजीर के बीच मतभेदों की वजह से यह नीति लागू नहीं हो पाई क्योंकि गुटबाजी प्रारंभ हो गई थी। जाट एक बार फिर आगरा दिल्ली मार्ग पर छापामारी के कामों में संलग्न हो गए। फारुक/सियार ने राजा जय सिंह को आक्रामक अभियान चलाने को कहा, किंतु वजीर ने राजा की जान का ही सौदा करने का समझौता किया। इसका परिणाम यह हुआ कि संपूर्ण उत्तर भारत में या तो जमींदारों ने विद्रोह कर दिया या फिर जमा किए राजस्व को राजकोष में देने से इंकार कर दिया। इधर फरुखसियर ने मराठी सरदारों को दक्कन के सूबेदार की सेनाओं का विरोध करने का गुजारिशी पत्र लिख दक्कन की समस्याओं को और जटिल बना दिया, क्योंकि दक्कन का सूबेदार सैय्यद हुसैन अली खान का प्रतिनिधि तथा सहयोगी था। अंततः 1719 में सैय्यद बंधु जोधपुर से अजीत सिंह तथा मराठा सेनाओं को बादशाह को पदच्युत करने के लिए ले आए।

फखरुर्सियार के कत्ल ने सैय्यद बंधुओं के खिलाफ संभ्रात कुलों में विद्रोह की आग जला दी। ये वर्ग सैय्यद बंधुओं की बढ़ती शक्ति से भी ईर्ष्या रखते थे। इनमें से कई अमीरों, मुख्यतः औरंगजेब के समय के पुराने अमीरों ने राजस्व क षि को वजीर के प्रोत्साहन के प्रति गुस्सा किया, जो उनके अनुसार मुगल शासन कला की धारणा का खुलेआम उल्लंघन था। फखरुर्सियर के स्थान पर सैय्यद बंधुओं ने 8 माह में तीन युवा राजकुमारों को एक के बाद एक गद्दी सौंपी। दो राजकुमार तो रफी–उर–दरजात तथा रफी–उद–दवताह क्षयरोग की वजह से म त्यु को प्राप्त हुए, किंतु तीसरे राजकुमार ने जिसने मुहम्मदशाह की उपाधि धारण की थी, सैय्यद बंधुओं के नियंत्रण से बाहर निकलने के लिए समुचित शक्ति का उपयोग किया।

निजाम–उल–मुल्क, चिनकिलच खान तथा उसके पिता के चचेरे भाई मुहम्मद अमीन खान के नेत त्व में एक शक्तिशाली समूह का संगठन हुआ तथा इन प्रभावशाली अमीरों ने अंततः सैय्यद बंधुओं को सत्ता से बाहर का रास्ता दिखाया (1720)। जिस समय मुहम्मद शाह (1719–1748) गद्दी पर बैठा, तब राजा तथा अमीरों के आपसी रिश्ते एकदम बदल चुके थे। अमीरों के व्यक्तिगत स्वार्थ की छाया राजनीति तथा शासन की गतिविधियों पर पड़नी प्रारंभ हो गई थी। सन 1720 में सैय्यद अब्दुल्ला खान के स्थान पर मुहम्मद अमीन खान वजीर बना। सन 1720 में अमीन खान की म त्यु के पश्चात थोड़े समय के लिए यह पद निजाम–उल–मुल्क की झोली में गया क्योंकि जुलाई 1724 ई. में अमीन खान के पुत्र कमर–उद–दीन ने वंशानुगत अधिकार का दावा कर वजीर पद पर कब्जा जमा लिया। अमीर खुद ही इन नियुक्तियों का निर्देश देते थे। इस समय तक

अमीरों के पास बहुत ज्यादा शक्तियां आ चुकी थीं। वे अपने स्वार्थ हेतु बादशाह के नाम का फरमान जारी करवाया करते थे। बादशाह की स्थिति मात्र कठपुतली की हो गई थी, जिसके पास शक्ति नहीं थी। असली शक्ति अमीरों के संघों के हाथों में थी। अमीर पूरे साम्राज्य की गतिविधियों को केन्द्र से नियंत्रित करते थे, यहां तक कि उन्हें उन राज्यों की स्थिरता की भी काफी फिक्र थी, जहां उनकी जागीरें थीं। बादशाह के नाम पर शासकों तथा फौजदारों तथा अन्य स्थानीय कार्यालयों को फरमान (कुछ अधिकार प्रदान करने का जनादेश या विशेषाधिकार) भेजे जाते थे। औरंगजेब के उत्तराधिकारियों की व्यक्तिगत असफलताओं ने शाही सत्ता/प्रतिष्ठा का भी क्षय किया। जहांदार शाह में बड़प्पन तथा शालीनता का अभाव था, फरुखसियार अस्थिर बुद्धि का था, मुहम्मदशाह छिछोरा था तथा आराम और विलासिता का शौकीन था। बादशाह से निकटता क्षेत्रीय स्तर पर भी नियुक्ति, पदोन्नति तथा निलंबन का कारण बनती थी।

15.2 क्षेत्रीय राजनीति तथा राज्यों का उदय

मुगल साम्राज्य के पतन के क्रम में तथा उसके बाद की शताब्दी (अनुमानतः 1700 से 1850 ई.) में भारत में उदय हुए राज्य, संसाधन, दीर्घकालिता तथा प्रधान लक्षणों के आधार पर भिन्न–भिन्न थे। इनमें से कुछ राज्य जैसे कि दक्षिण में हैदराबाद ऐसे क्षेत्र में स्थित था जिसने आरंभिक मुगल काल में स्वतत्रंता हासिल कर ली थी तथा राज्य निर्माण की एक स्थानीय तथा क्षेत्रीय परम्परा को चलाने वाला बना था। अन्य राज्य वे थे, जिनकी अपनी स्वाभाविक विशेषताएं थीं तथा जो सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दी में घटित बहुत ही विशिष्ट पद्धति से पैदा हुए थे। विशेष रूप से उत्तर मुगलकाल में ये राज्य जातीय तथा साम्प्रदायिक आधार पर आधारित थे, जैसे–मराठा, जाट और सिक्ख। फलस्वरूप इन क्षेत्रीय शक्तियों की सम्पन्नता ने स्थानीय भूमि तथा शक्तिधारियों को बाहय अधिकारियों के विरुद्ध शस्त्र उठाने का साहस दिया। हालांकि परस्पर शत्रुता तथा सघर्षों ने इन विद्रोहों को अपने हितों को संगठित कर शासन के विरुद्ध प्रभावी चुनौती देने में बाधा उत्पन्न की। वे रिश्तेदारों, किसान, तथा अपनी जाति के छोटे जमींदारों के समर्थन पर ही निर्भर थे। हर स्थानीय समूह अपनी सम द्धि दूसरे की लागत पर बढ़ाना चाहता था। तत्कालीन राजनीति में शाही प्रतीकों को महत्त्व देने की आवश्यकता आनुवांशिक थी। हर मुकाबला करने वाला शक्ति के क्षेत्र में अपनी शक्ति आंकता था तथा अपने पड़ोसी राज्यों पर अपना वर्चस्व स्थापित करने के नए मौके तलाश करता था। इन राज्यों को एक प्रकार की वैधता की आवश्यकता थी, जो मुगल बादशाह की सर्वस्वीक त सत्ता में आसानी से उपलब्ध हुई। उन्हें मुगलों के प्रतीकात्मक आधिपत्य को स्वीकार करने में किसी भी प्रकार का भय नहीं था, जो उनकी राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा को कम न कर सका। केन्द्रीय सत्ता के धीमे–धीमे पतन ने नए प्रकार की क्षेत्रीय शक्तियों को जन्म किया। सक्षम तथा सम द्ध अमीरों ने अपने लिए राजनीतिक आधार बनाए। वजीर चिन क्लिच खां ने खुद यह मार्ग खोला। प्रशासन में सुधार करने में असफल रहने पर उसने 1723 में कार्यालय त्याग दिया तथा अक्तूबर 1724 में हैदराबाद की स्थापना हेतु दक्षिण की ओर रुख किया। मुगल दक्कन दरबारियों ने इस संबंध में चिंता जताते हुए क्षेत्रों से निश्चित राजस्व की प्राप्ति सुनिश्चित करने का प्रयत्न किया, जिससे शाही एकता का रूप कायम रह सके। साम्राज्य के विघटन को देखते हुए मराठों ने विस्तारवादी महत्त्वाकांक्षाओं को अमल में

लाते हुए उत्तर की ओर बढ़ना प्रारंभ किया तथा मालवा, गुजरात और बुंदेलखंड को जीत लिया। तब, 1738–39 में ईरान के शासक नादिरशाह ने भारत पर आक्रमण किया।

पाठगत प्रश्न 15.1

1. 1707 ई. में औरंगजेब का उत्तराधिकारी कौन बना? उसने किस नीति का अनुसरण किया?

2. सैय्यद बंधु कौन थे? उनकी कुछ उपलब्धियों का उल्लेख करें।

3. हैदराबाद राज्य की स्थापना किसने की? मुगल दरबार में उसका क्या पद था?

4. औरंगजेब की म त्यु के पश्चात अमीरों की शक्ति में व द्धि के दो कारणों का उल्लेख करें?

5. 1738 में किस देश के शासक ने भारत पर आक्रमण किया?

15.3 मराठा शक्ति

इसमें कोई शक नहीं कि मुगल वंश को लंबी अंतिम अवधि में जो एकल महत्त्वपूर्ण शक्ति उदित हुई, वह थी मराठा शक्ति। मराठा योद्धाओं में सर्वाधिक प्रमुख कुल था भोंसले। शिवाजी भोंसले दक्षिण राजनीति में महत्त्वपूर्ण शक्ति बनकर उभरे।

हालांकि शिवाजी जैसा सौभाग्य उनके पुत्र तथा भाइयों को प्राप्त न हो सका (क्रमशः संभा जी तथा उनके छोटे भाई राजाराम)। एक समय तो ऐसा प्रतीत होने लगा था कि मराठा शक्ति अपने पतन पर थी। किन्तु आरम्भिक 18वीं शताब्दी में कुछ परिवर्तन हुए तथा मराठा शक्ति में सुधार की स्थिति बनी। इस संदर्भ में सबसे मुख्य चरण साहू का शासन था, जो 1708 में राजाराम का उत्तराधिकारी बना। साहू ने 1749 ई० तक चार दशकों तक शासन किया। यह अवधि चित्पावन गोत्र के ब्राहमण मंत्रियों के वर्चस्व के लिए जानी जाती है, जो क्रमशः महाराष्ट्र की राजनीति पर छा गए। भोंसले शक्तिहीन हो गए। पेशवा की उपाधि धारण कर बाला जी विश्वनाथ पहली प्रमुख शख्सियत के रूप में मिलते हैं, जिन्होंने शक्ति के उदय में साहू की सहायता की। विश्वनाथ तथा उनके उत्तराधिकारी बाजीराव प्रथम (1720–1740 के मध्य पेशवा) ने आधिकारिक तौर से मराठा राज्य को अपने पूर्ववर्ती भोसलों से कही अच्छा प्रबंधन देने में सक्षम रहे। उन्होंने मुगल क्षेत्रों से शुल्क ग्रहण करने की प्रथा को व्यवस्थित किया तथा सरदेशमुखी और चौथ (दोनों शब्द शुल्क संग्रहण के अनुपात को बतलाते हैं) नाम दिया गया। प्रतीत होता है कि उन्होंने भू–राजस्व के मूल्यांकन तथा संग्रहण करने के उपायों को ज्यादा मजबूत किया जैसा

कि अन्य मुगल किया करते थे। पेशवाओं तथा उनके अधीनस्थों की राजस्व संबंधी शब्दावली तथा अन्य कागजातों की भाषा फारसी भाषा से ली गई है। यह मुगल तथा मराठी राजस्व परम्परा की व्यापक निरंतरता को प्रदर्शित करती है।

मराठा राज्यसंघ

साहू के शासन के अन्त तक कुछ शक्तिशाली मराठा क्षेत्र उसके पूर्ण नियंत्रण में थे। इस काल में उनके नियंत्रण वाले क्षेत्रों में व्यापार, बैंक तथा वित्त के परिष्क त क्षेत्रों में विकास दिखाई दिया। पुणे आधारित बैंक घरानों की कई शाखाएं गुजरात, गंगा घाटी तथा दक्षिण में भी थीं। तटवर्ती कार्यों पर ध्यान दिया किया गया। बालाजी विश्वनाथ ने अंग्रिया कुल को परिष्क त करने में कुछ सावधानी बरती, जो कोलाबा तथा अन्य पश्चिमी तटों पर जहाजों को नियंत्रित करती थी। ये पोत न सिर्फ बम्बई में नवस्थापित अंग्रेजी व्यवस्था के लिए बल्कि गोवा, दमन तथा बेसन में पुर्तगालियों के लिए भी खतरा बन गए। दूसरी ओर मूल मराठा केंद्र से काफी दूर कई गतिविधियों का संचालन हुआ। इन सरदारों में सबसे महत्त्वपूर्ण थे गायकवाड़, सिंधिया तथा होल्कर। भोंसले परिवार की कुछ शाखाएं थी कोल्हापुर तथा नागपुर में फिर से स्थापित हुई जबकि मुख्य धारा दक्कन केंद्रस्थल, सतारा में ही रहीं। अब इनके प्रभावों का अध्ययन करते हैं।

नागपुर के भोंसले

कोल्हापुर के भोंसले तथा थंजावुर के व्यामकोजी के वंशजों, जो सतारा राजा के समान हैसियत का दावा कर रहे थे, के विपरीत नागपुर की वंशावली सतारा शासकों के स्पष्ट रूप से अधीनस्थ थी। इस वंशावली का सबसे प्रतापी शासक रघुजी भोंसले (1727–55 ई0) था, जो कि बंगाल तथा बिहार में मराठा साम्राज्य विस्तार का उत्तरदायी माना जाता है। उसके उत्तराधिकारियों जानोजी, साबाजी तथा मुधोजी के संबंध पेशवा तथा सतारा वंशावली के साथ घटते–बढ़ते रहे तथा इनके साथ गरमजोशी वाले रिश्तों के स्थान पर ढीली–ढाली संधि रही। अन्य अधीनस्थ शासक, जो सतारा शासकों की छत्रछाया में फले–फूले तथा पल्लवित हुए वे सतारा शासको तथा उनके पेशवाओं के प्रति अपनी राजनीति के उपयोग में कुछ हद तक अवसरवादी ही साबित हुए।

बड़ौदा के गायकवाड़

गायकवाड़ों ने अपनी उपस्थिति 1720 में दर्ज कराई। प्रारम्भ में वे न सिर्फ शक्तिशाली भोंसले परिवार के बल्कि दबाधे परिवार के भी अधीनस्थ थे। यह साहू की म त्यु थी, जिसने पेशवाओं की शक्ति को और बढ़ाया तथा गायकवाड़ों की स्थिति और भी बेहतर हुई। 1750 के पूर्वार्द्ध में गुजरात के राजस्व के बड़े हिस्से पर उनके अधिकार को पेशवा ने मान्यता दी। 1752 में गुजरात क्षेत्र से मुगल शासक के अहमदाबाद से निकाले जाने से इस प्रणाली पर अपनी मोहर लगा दी। गायकवाड़ों ने अपनी राजधानी बड़ौदा में बनाई जिससे उस क्षेत्र में व्यापार तथा उत्पादन के तंत्र का पुनःएकीकरण हुआ। बड़ौदा में दामाजी के शासनकाल (म त्यु 1768 ई0) के बाद कुछ हलचलों का युग आया। गायकवाड़ यद्यपि पुणे तथा पेशवाओं पर अर्द्धआश्रित थे, विशेषकर उत्तराधिकार संकट के मामले में। दामाजी के अंतिम उत्तराधिकारी फतेहसिंह (1771–89) अधिक समय तक पेशवाओं का सहयोगी नहीं बना तथा 1770 के उत्तरार्द्ध 1780 के पूर्वार्द्ध में उसने अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी से समझौता किया जिसने धीर – धीर सरकारी कामकाज में

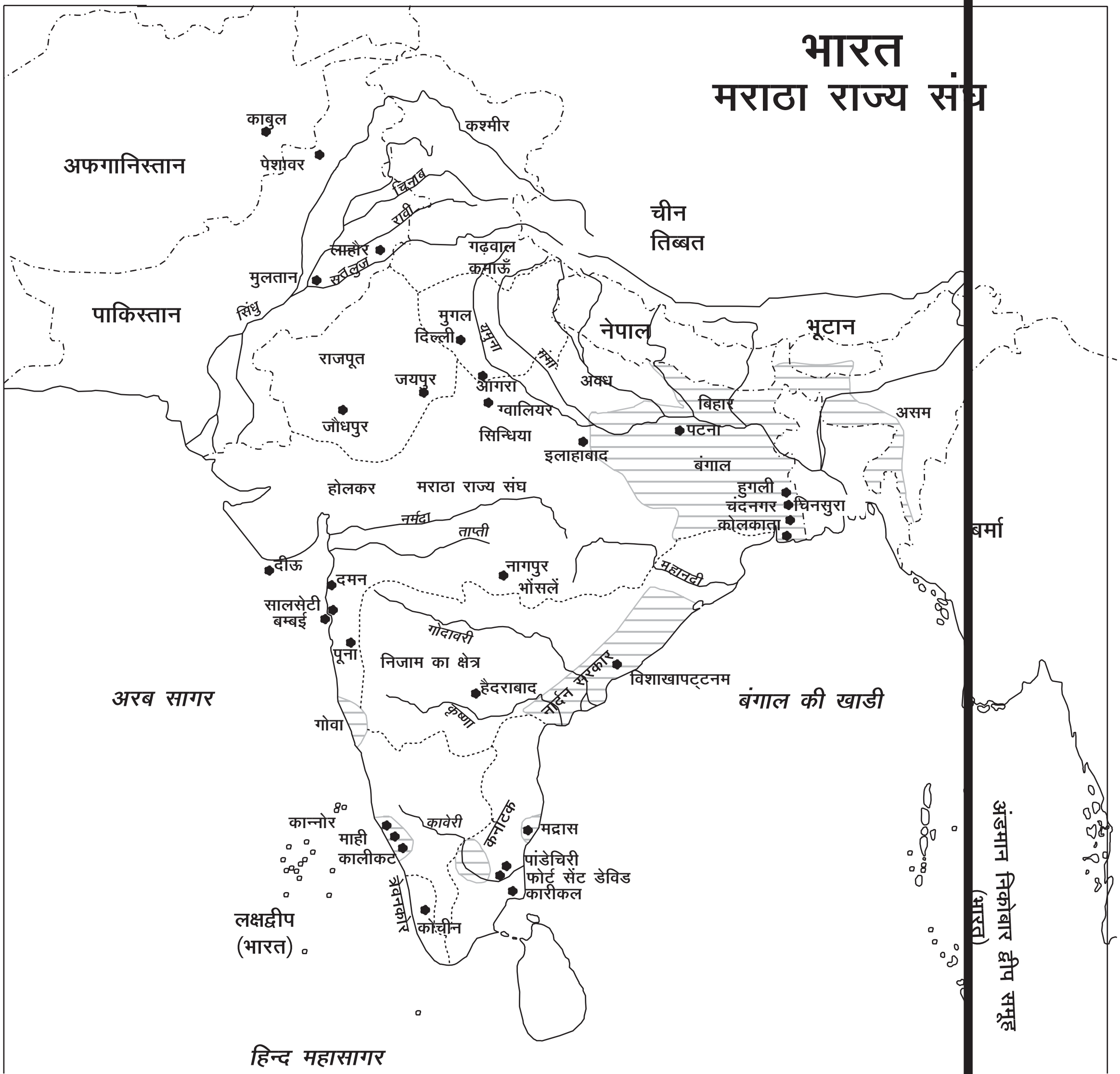

मानचित्र 15.1 मराठा राज्य संघ

ब्रिटिश हस्तक्षेप में व द्धि की। सन 1800 तक पेशवाओं के बदले अंग्रेज ही उत्तराधिकार के मसले पर निर्णायक होते थे, जो 19वीं शताब्दी में उनके अधीनस्थ शासक बन गए थे।

इन्दौर के होल्कर

होल्करों की बात करें, तो उनका पद तथा सम द्धि उल्लेखनीय रही। आरम्भ में उनके पास बहुत ही कम राजनीतिक शक्ति थी। हालाँकि 1730 तक उनके सरदार मल्हार राव होल्कर ने अपनी स्थिति काफी सुद ढ़ कर ली थी। उन्हें चौथ संग्रहण का काफी बड़ा हिस्सा मालवा, पूर्वी गुजरात तथा खानदेश से प्रदान किया जाता था। मल्हार राव ने इन्दौर में स्वयं की सत्ता स्थापित की जहां उसके उत्तराधिकारी ने मुख्य व्यापारिक मार्गों तथा बुरहानपुर का प्रमुख व्यापारिक केंद्र पर नियंत्रण स्थापित किया था। उसके पश्चात

उसके साम्राज्य का नियंत्रण उसके पुत्र की विधवा के हाथों में चला गया। अहिल्याबाई जिनका शासन 1765 से 1794 तक चला तथा होल्कर को गौरव के शिखर तक पहुंचाया तथापि उसके उत्तराधिकारी अगले प्रधान सिंधिया–परिवार के उत्तराधिकारी के बराबर नहीं हो सके।

ग्वालियर के सिंधिया

सिंधिया वंश ने उत्तर भारत की राजनीति में अपना स्थान पानीपत के त तीय युद्ध (1761) के बाद के दशक में बनाया। होल्कर की ही भांति सिंधिया भी मुख्य रूप से मध्य भारत में ही केंद्रित थे। पहले उज्जैन तथा 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के बाद ग्वालियर में महादजी सिंधिया के लंबे शासन काल (1761–1794) के दौरान यह वंश संगठित हुआ।

महादजी कुशल तथा नवपरिवर्तनकारी सैन्य प्रशासक सिद्ध हुए। उन्होंने अपनी सेवा में कई यूरोपीय सैनिकों को नियुक्त किया। 1770 के पश्चात उनकी शक्ति में अचानक व द्धि हुई। इस अवधि के दौरान वह उत्तर भारत में अपना साम्राज्य विस्तार करने में सफल रहे, जो अफगान हमलों के उपरान्त कमजोर हो गया था। शाह आलम द्वितीय के शासन काल में दरबार में उसने अपने हस्तक्षेप द्वारा प्रभाव स्थापित किया था। 1780 के मध्य में मुगल बादशाह ने उसे अपने कामकाज का 'उप–शासक' नियुक्त किया था। उसका प्रभाव हमें न सिर्फ दिल्ली और आगरा क्षेत्र में मिलता है, बल्कि वह राजस्थान तथा गुजरात तक विस्त त था, जो उसे उस युग का सबसे प्रभावी मराठा शासक सिद्ध करता है। ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकारी उससे बात करते समय काफी सजग रहते थे।

उसके संबंध पेशवा नाना फडनवीस (पुणे) के साथ तनावों से पूर्ण थे। दुर्भाग्य से उसके उत्तराधिकारी उसके जितने सक्षम नहीं हो पाए तथा दौलत राव सिंधिया (1794–1827) अंग्रेजों द्वारा पराजित हुआ तथा 1803 में उत्तर तथा दक्षिण के अपने क्षेत्र समर्पण करने को बाध्य हुआ।

इन प्रभावी नेताओं की अवधि, विशेषकर महादजी सिंधिया की, मुगल पतन के बावजूद मुगल प्रतीकों के प्रभाव को दर्शाती है। उदाहरण के लिए, ग्वालियर को अंग्रेजों से मुक्त कराने के पश्चात महादजी ने मुगल बादशाह द्वारा प्रदत्त क्षेत्रों पर नियंत्रण का पूर्ण ध्यान रखा। साथ ही उसने मुगलों द्वारा दिए विशेषाधिकार और अवधियां यथा 'अमीर–उर–अमारा' (अमीर–प्रमुख) तथा नायब वाकी–ए–मुत्लक (उपप्रतिशासक) धारण की। ऐसा करने वाला वह एकमात्र नहीं था। 18वीं शताब्दी में मुगल प्रभुत्व को पूर्णतः कराने वाले उदाहरण विरले ही है। मुगल पतन के बावजूद भी मुगल सम्मान तथा उपाधियां प्रदान करने का सिलसिला तथा मुगल प्रशासित शब्दावली तथा वित्तीय प्रणालियों का प्रचलन निरंतर होता रहा।

पाठगत प्रश्न 15.2

1. मुगल वंश के पतन के दौरान उभरी सबसे महत्त्वपूर्ण एकमात्र शक्ति के बारे में लिखें?

2. मराठा शासन के दौरान पेशवा कौन कहलाए? 1720–1740 के दौरान सत्तारुढ़ पेशवा का नाम लिखें?

---

3. मराठा संदर्भ में चौथ तथा सरदेशमुखी से आप क्या समझते हैं?

---

4. भारत के पश्चिमी तट पर प्रमुख पुर्तगाली व्यापार केंद्रों का नाम लिखें?

---

5. मराठा राज्यसंघ में हुई विभिन्न राजवंशों के विषय में लिखें? किस क्षेत्र में उन्होंने शासन किया?

---

6. अहिल्याबाई कौन थी? उसकी मुख्य उपलब्धियां क्या थीं?

15.4 बंगाल के नबाव

औरंगजेब के शासनकाल में दीवान के पद पर आसानी मुर्शीद कुली खान ने केंद्रीय सत्ता की कमजोरी का फायदा उठाकर खुद को स्वतंत्र घोषित कर दिया था। हालांकि वह मुगल दरबार में नियमित रूप से शुल्क भेजता रहा। अली वरदी खान ने मुर्शीद कुली खान के परिवार को सत्ताच्युत कर 1739 में खुद को नवाब घोषित कर दिया। इन नवाबों ने शांति तथा स्थिरता कायम की और क षि को प्रोत्साहित किया। हिन्दू तथा मुसलमान दोनों को ही समान अवसर प्रदान किए गए। किन्तु नवाब अंग्रेजी व्यापार कंपनियों की उपस्थिति के दीर्घकालीन प्रभावों को भांप न सके तथा सैन्य तैयारियों में ढिलाई बरत दी। सन 1756–1757 में अली वरदी खां के उत्तराधिकारी सिराज–उद–दौला ने व्यापारिक अधिकारों हेतु अंग्रेजों से युद्ध किया था। जून 1757 में पलासी के मैदान में हुई उसकी पराजय ने बंगाल तथा पूरे भारत में अंग्रेजों का मार्ग प्रशस्त किया।

15.5 अवध के नबाव

अवध के मुगल सूबे ने कमजोर केंद्रीय नियंत्रण के रहते क्षेत्रीय शासक सादत–खान–बुरहान–उल–मुल्क की महत्त्वाकांक्षा को जाग त कर दिया। सादत खान ने स्थानीय जमींदारों को अनुशासित किया तथा उच्च चेतन, उच्च शस्त्र सज्जित तथा उच्च प्रशिक्षित सेना को आकार दिया। 1739 में अपनी म त्यु से पूर्व सादत खान ने क्षेत्रीय प्रमुख के पद को वंशानुगत बना दिया। उसके उत्तराधिकारियों सफदर जंग तथा असफ उद दौला ने न सिर्फ उत्तर भारत की राजनीति में अहम भूमिका निभाई, बल्कि अवध की नवाबी को भी प्रशासनिक स्थिरता प्रदान की। नवाबों के नेत त्व में पहले फैजाबाद तथा बाद में लखनऊ कला, साहित्य तथा शिल्प के क्षेत्र में दिल्ली का प्रति–स्पर्धी बना। इमामवाड़ा तथा अन्य भवनों से क्षेत्रीय स्थापत्य कला की झलक भी प्राप्त होती है। सांस्क तिक सामंजस्य के परिणामस्वरूप कत्थक न त्य शैली का उद्‌भव भी हमें देखने को मिलता है।

15.6 पंजाब के सिक्ख

मुगलों ने बंदा बहादुर के नेत त्व में सिक्खों का दमन किया था। किन्तु इससे मुगलों के प्रति सिक्ख विद्रोह समाप्त नहीं हुए थे। 1720 ई. से 1730 ई. के मध्य अम तसर सिक्ख गतिविधियों का एक मुख्य केंद्र बनकर उभरा, शायद तीर्थों का स्थान होने की वजह से अपनी महत्ता की वजह से। तत्कालीन सर्वाधिक प्रमुख सिक्ख शासक कपूर सिंह ने उसके आस–पास के क्षेत्र से संचालन किया। उसने राजस्व सैन्य प्रणाली की स्थापना की। कुछ सिक्ख शासकों ने स्वयं को राजनीतिक शक्ति के रूप में संगठित करना प्रारंभ कर दिया था। इन गतिविधियों ने लाहौर सूबे के मुगल शासकों को इस क्षेत्र को स्वतंत्र सत्ता का केंद्र बना देने के मंसूबों पर पानी फेर दिया। पहले अब्दुससमद खान तथा बाद में उसके पुत्र जकारिया खान ने नियंत्रण स्थापित करने के प्रयत्न किए। 1745 में ज़करिया खान की म त्यु के पश्चात सिक्ख योद्धा शासकों जैसे जस्सा सिंह अहलूवालिया सत्ता में आए। उन्होंने बाद में कपूरथाला राज्य की नींव डाली। सिक्ख सैन्य नेताओं के नेत त्व में सैन्य क्षेत्रों का विस्तार, पंजाब पर अहमद शाह अब्दाली के आक्रमण के परिप्रेक्ष्य में महत्त्वपूर्ण विशिष्टता थी। पूर्वी पंजाब तथा बारी दोआब में यह प्रक्रिया परिलक्षित होती है। हालांकि अब्दाली के अभियानों को विरोध का सामना पंजाब में 1750 तथा 1760 में सिक्खों ने ही किया तथा मराठाओं ने भी इस संघर्ष में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। अंततः 1760 के मध्य तक लाहौर में सिक्खों की सत्ता की स्थापना हो गई तथा अफगान अपनी शुरूआती विजयों को संगठित नहीं रख सके। अहमद शाह के उत्तराधिकारी तैमूर शाह (1772–93) ने सिक्खों द्वारा जीते गए कुछ क्षेत्रों (जैसे मुल्तान) को पुनः जीता तथा अहमद शाह के वंशज शताब्दी के अंत तक इस लक्ष्य के प्रति प्रयत्नशील रहे। किन्तु 1770 तक उन्होंने लगभग 60 सिक्ख सरदारों के साथ संधि कर ली थी, जिनमें से कुछ राज्य जैसे नाभा और पटियाला ब्रिटिश अधीनस्थ बन कर उभरे।

सिक्ख प्रशासकों ने मुगल बादशाहों द्वारा प्रयुक्त प्रशासनिक व त्तियों को ही जारी रखा। सरदारों के अधीनस्थों को जागीर दी जाती थी। मुगल नौकरशाही के ईरानी ढंग ने मुख्य रूप से अपनी पकड़ बनाए रखी। ऐसे ही सिक्ख शासक चढ़त सिंह सुकेरचकिया के पौत्र राजा रंजीत सिंह, जिन्होंने इन छोटे राज्यों को बड़े साम्राज्य में अल्प समय के लिए संगठित कर लिया। रंजीत सिंह का प्रभावी शासन 1799 से 1839 तक चला। इस काल में अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी की शक्ति भारत के हर प्रांत में बढ़ रही थी। रंजीत सिंह की म त्यु के 10 वर्ष उपरान्त ही अंग्रेजों ने पंजाब पर आधिपत्य स्थापित कर दिया। महाराजा रंजीत सिंह के सत्ता के प्रभाव का मुख्य कारण उत्क ष्ट सैन्य बल, किराए के यूरोपीय सैनिक तथा उन क्षेत्रों के सामरिक ठिकाने थे, जो उन्हें अपने पिता से विरासत में मिले थे। महाराजा रंजीत सिंह का शासन, सिक्खों द्वारा मुगलों के संग किए संघर्षों की पराकाष्ठा थी। यह एक राजतंत्र/शासनतंत्र के सिद्धांतों पर आधारित शासन था। उसने महान व्यावसायिक नगर लाहौर को अपनी राजधानी बनाया, जिसे उसने 1799 में जीता था। व्यापारिक मार्गों पर नियंत्रण स्थापित करने के उपरांत उसने राजस्व में व द्धि के लिए नमक, अनाज तथा कश्मीर से वस्त्रों के व्यापार पर एकाधिकार स्थापित किया। इन आय स्रोतों का प्रयोग करके उसने 40,000 अश्वारोही तथा घुड़सवार सेना के बनाने में किया। सन 1809 तक वह अधिकतर पंजाब का निर्विवाद मालिक था।

15.7 जयपुर एवं अन्य राजपूताना राज्य

पूर्वी राजस्थान में जयपुर (पूर्व में आम्बेर), कछवाहा कुल द्वारा नियंत्रित राजपूत राज्य था। 18वीं शताब्दी के आरंभ में शासक जय सिंह सवाई ने अपनी शक्ति के चहुं ओर विस्तार के लिए कुछ कदम उठाए। ये थे– 1. अपने ग ह क्षेत्र के आसपास के क्षेत्र में अपनी जागीरों की व्यवस्था करना तथा 2. क षि के माध्यम से भू–राजस्व एकत्रित करना (भूमि कर के संग्रहण के लिए भूमि के वे खंड प्रयुक्त होते थे, जो राज्य द्वारा व्यक्ति को किराए पर मिलती थी), जो कि धीरे– धीरे स्थाई हो गया। सन 1743 में उसकी म त्यु के पश्चात राजा जय सिंह (जिसके ऊपर जयपुर नाम पड़ा) क्षेत्र का एकमात्र सर्व–शक्तिमान शासक बनकर उभरा। अधिकतर राजपूत राज्य छोटे झगड़ों तथा संघर्षों में आपस में ही उलझे रहते थे। मारवाड़ का अजीत सिंह अपने पुत्र द्वारा ही मारा गया था।

सन 1750 में भरतपुर के जाट शासक सूरजमल ने राजा जयसिंह की ही भांति मुगल राजस्व प्रशासन की परिवर्तित पद्धति अपने क्षेत्र में लागू की। हालांकि इस समय तक जयपुर राज्य के भविष्य पर प्रश्न चिह्न लग चुके थे। मराठों से बढ़ती चुनौतियों के चलते छोटी अवधि के राजस्व पाने के लिए साधन अपनाए गए। इसी समय 1750 तथा 60 के मध्य फसलों की नाकामी ने पहले से ही दुर्बल क षि को और भी बुरी तरह प्रभावित किया। 18वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध इस प्रकार आर्थिक मंदी तथा जयपुर की राजनीतिक शक्ति के पतन के लिए जाना जाता है। इस अवधि के दौरान जयपुर मराठों विशेषकर महादजी सिंधिया के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण लक्ष्य बन गया था।

ऊपर वर्णित सभी राज्य, सिवाय मराठों के, भूमि से जुडे हुए थे। इसका अर्थ यह नहीं कि इनके व्यवहार में व्यापार का कोई स्थान नहीं था, रंजीत सिंह का शासन मुख्यतः व्यापार पर ही निर्भर था। हालांकि समुद्र तक पहुंच के साधनों के अभाव ने राज्यों की पहुँचने की गति नहीं होने में व द्धि ही की। विशेषकर उस युग में जब ईस्ट इंडिया कंपनी, जो कि मुख्य शक्ति थी, खुद प्रारंभ में एक समुद्री व्यापारी थे।

15.8 दक्षिण भारत में राजनीति

जिन क्षेत्रों की अभी तक चर्चा की गई हैं, उनसे हट कर दक्षिण भारत के, विभिन्न राज्यों ने इस दौरान अपनी स्थिति को सुद ढ़ बनाने के लिए सागर तथा बंदरगाहों का उपयोग किया। इनमें से मुख्य थे त्रावणकोर (केरल) के मार्तण्ड वर्मा तथा राम वर्मा मैसूर के हैदर अली तथा टीपू सुल्तान।

इन राज्यों की उपस्थिति उत्क ष्ट रूप से हम 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में या लगभग 1740 के करीब पाते हैं। इससे पूर्व दक्षिण भारत पर मुस्लिम राजाओं का वर्चस्व था, 1680 तथा 1690 के दौरान या 1700 के पश्चात दूसरी लहर के फलस्वरूप क्षेत्र में कुछ राजा साथ आए। इनमें से बहुत से व्यक्तियों ने खुद को मुगल शासन के अधीन शुल्क अदा करने वाले सरदारों के रूप में स्थापित किया। इनमें से कुछ अपेक्षाक त नवाब थे, जैसे बालाघाट के नवाब या उत्तर कर्नाटक (जैसे सीरा का अब्दुल रसूल खान)। इनमें से कुछ तो राजनीतिक रूप से प्रभावशाली थे जैसे निजाम–उल–मुल्क तथा अर्कोट में सदुल्लाह खान। 1740 तक निजाम उल मुल्क ने हैदराबाद में अपनी स्थिति को संगठित कर लिया था, वही अर्कोट तीन दशक पहले उभर चुका था।

वंशानुगत उत्तराधिकार को स्थापित करते हुए भी इनमें से किसी भी शासक ने पूर्ण स्वायत्तता का दावा प्रस्तुत नहीं किया था। इस प्रकार वे स्वयं को मुगलों का प्रतिनिधि बताकर ही शासन करते रहे। 1720 में दक्षिण भारत की राजनीति तीन शक्तियों के बीच मोहरा बनकर उभरी, ये थे मराठा (तंजौर तथा अन्य क्षेत्रों के) निजाम तथा अर्कोट (कर्नाटक) के नवाब।

18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में इन तीनों शक्तियों की सत्ता का क्षय होने लगा था। 1740 तथा 1750 के प्रारंभ में अर्कोट के उत्तराधिकार विवाद ने इसके शासकों को निजी अंग्रेज व्यापारियों के साथ वित्तीय जोड़–तोड़ करने को बाध्य कर दिया, क्योंकि युद्ध के खर्चों के लिए उन्हें धन की आवश्यकता थी। 1750 में अपने संस्थापक निजाम–उल–मुल्क की म त्यु के पश्चात हैदराबाद भी पतन की राह पर चल पड़ा था। तटीय जिलों से शीघ्र ही नियंत्रण समाप्त हो गया तथा राज्य की जनसंख्या बहुत कम हो गई तथा भूमि से जुड़ी रह गई। इस संदर्भ में राज्य के पास एकमात्र विकल्प एक विस्त त तथा सुनियोजित सैन्य मशीनरी तथा खुला बाह्य समर्थन था। इस काल के राजतंत्र में व्यापार का नियंत्रण भी अत्यंत संवेदनशील हो चला था।

त्रावणकोर राज्य

मराठा शासक मार्तंड वर्मा (1729–58) ने वेनाद (त्रावणकोर) केरल राज्य के संचालन में तीन सैद्धांतिक पद्धतियों का उपयोग किया। राजा ने अपनी वैधता सुद ढ़ करने के लिए कुछ उपायों की शुरूआत की। ये थे– 1. उसके द्वारा 50,000 की शक्ति वाली वास्तविक सेना का गठन 2. नैय्यर अभिजात वर्ग की शक्ति को कम करना, जिस पर क्षेत्र सैन्य रूप से निर्भर था तथा 3. तथाकथित त्रावणकोर रेखा पर अपने राज्य की उत्तरी सीमा की किलेबंदी करना। इस शासक की एक नीति सीरियाई ईसाइयों को संरक्षण देने की भी थी, जो कि उस क्षेत्र की प्रभावी व्यापारिक शक्ति थी, जिससे कि व्यापार में यूरोपीय वर्चस्व कम हो सके। मुख्य वस्तु जो हालांकि काली मिर्च थी, किन्तु शाही एकाधिकार के अंतर्गत अन्य कई वस्तुएं आती थीं, जिनका व्यापार करने के लिए आज्ञापत्र की आवश्यकता होती थी। मार्तंड के उत्तराधिकारी राम वर्मा के शासनकाल (शासनकाल 1758–98) में भी ये नीतियां व्यापक स्तर पर चलती रहीं, जो कि अपने राज्य की नए उभरते प्रतिद्वंद्वी से रक्षा करने में सक्षम रहा तथा वह खतरनाक प्रतिद्वंद्वी था मैसूर राज्य।

मैसूर का उदय

वादियार वंश के शासकों यथा कांथीरवा नरसाराजा तथा चिक्का देवा राजा, के अंतर्गत मैसूर एक महत्त्वपूर्ण राज्य बनकर उभरा। हालांकि मैसूर एक भूमि से जुड़ा राज्य था इसलिए व्यापार पर भी निर्भर था क्योंकि उसकी सैन्य आपूर्ति भारत की पूर्वी बंदरगाहों के तट से आती थी। चूंकि ये सभी बंदरगाह अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी के अधीन थे। अतः मैसूर की संवेदनशीलता बढ़ती गई। 1760 ई. से स्थिति में परिवर्तन के प्रयास किए गए। विस्थापित मूल के एक जुझारु योद्धा हैदर अली ने एक शक्तिशाली ताकत प्राप्त कर वदियार को शक्तिहीन कर तथा शक्तिशाली कलाले मंत्री परिवार को हटा कर सत्ता हासिल की। पहले हैदर तथा उसके बाद उसके पुत्र टीपू सुल्तान ने 1782 के बाद मैसूर को संगठित कर तथा भारतीय प्रायद्वीप के दोनों तटों तक पहुंच वाला राज्य बनाया।

कोडवों, उच्चभूमि कुर्ग राज्य के निवासी, की तुलना में वे अपेक्षाक त सफल थे। तटीय कर्नाटक तथा उत्तरी केरल उसकी तलवार के अधीन हो गए, इसने टीपू सुल्तान को अपनी शर्तों पर मध्य पूर्व के साथ कूटनीतिक तथा व्यावसायिक रिश्ते स्थापित करने में मदद की। अपने पिता की तुलना में टीपू की महत्त्वाकांक्षाएं ऊंची थी तथा उसने पहले से फैली मुगल सर्वोच्चता की छाया से बाहर निकलने का सफल प्रयत्न किया, जैसा कि पहले चर्चा कर चुके हैं। किन्तु हैदर अली व टीपू की समस्या आंतरिक सम्मति बनाने में असमर्थता रही। सैन्य तथा राजस्व संबंधी दक्षता के लिए विस्थापितों तथा किराए के सैनिकों पर उनकी निर्भरता बहुत अधिक थी तथा वे पोलीगार, स्थानीय चोरों से हमेशा टक्कर लेते रहे। 1770 तक मैसूर के सामने ईस्ट इंडिया कंपनी जैसे विकट सैन्य विरोध को सहना पड़ा। जिन्होंने उसे चैन नहीं लेने दिया। ये अंग्रेज ही थे, जिन्होंने मैसूर को उपजाऊ क्षेत्रों में नहीं पहुंचने दिया तथा भारत के पूर्वी बंदरगाह कोरोमंडल के मैदान से पहले रोक दिया। अंततः 1799 में अंग्रेजी सेना द्वारा टीपू का अंत हो गया।

पाठगत प्रश्न 15.3

1. किसके संरक्षण तथा किस क्षेत्र में न त्य की कत्थक शैली का विकास हुआ?

2. 1757 में हुआ प्लासी का युद्ध क्यों महत्त्वपूर्ण है?

3. मैसूर के उस सुल्तान का नाम लिखें जिसने अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी से लोहा लिया? अपने शासन के दौरान उसके समक्ष क्या कठिनाइयां आईं?

15.9 18वीं शताब्दी भारत में अर्थव्यवस्था

18वीं शताब्दी अतीत तथा भविष्य की अच्छी आर्थिक निरन्तरता की तुलना में कोई अच्छा प्रदर्शन नहीं कर सकी। यह काल भारत में अत्यधिक राजनीतिक खलबली का दौर था, जिसमें पहले तो राज्य का निर्माण होता था तथा अगले ही पल वह विघटित भी हो जाती थी। व्यवस्थता में अस्थिरता अपने चरम पर थी। यह भी निर्विवाद है कि सैन्य अभियानों से विस्थापन को बढ़ावा मिला। सिंचाई के जलाशयों का विध्वंस, पशुधन का जबरन सम्पत्ति हरण, जनता का बलात निष्कासन तथा उसके बाद के युद्धों में किसी से भी छिपा नहीं था। इन सबने आर्थिक स्थिरता पर हानिकारक प्रभाव डाला तथा प्रगति की राह में अनगिनत रोड़े अटकाए।

दिल्ली के नजरिए से देखें तो निश्चय ही 18वीं शताब्दी एक अंधेरा युग था। नादिर शाह, फिर अहमद शाह तथा अंततः रोहिल्ला 1761–1771 तक दिल्ली पर नियंत्रण स्थापित करने वाले के आक्रमणों ने दिल्ली को एक निरन्तर विध्वंस की ओर ढकेला। भारत के अन्य क्षेत्रों को शायद ही इस दौर से कभी गुजरना पड़ा हो, चाहे वह त्रिवेन्दरम, पुणे, पटना अथवा जयपुर हो। इस युग में राजनीतिक विकेन्द्रीकरण होने के कारण आर्थिक परिवर्तन का भी दौर चला, जिसके कारण दिल्ली तथा आगरा के अनुभव को इस संबंध में व्यापक रूप नहीं

दे सकते। हालांकि विभिन्न क्षेत्रों की परिस्थितियां एक–सी नहीं थी। कुछ क्षेत्रों में 18वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध ने विस्तार देखा, जैसे बंगाल, जयपुर और हैदराबाद। जबकि कुछ में यह देर से प्रस्फुटित हुआ जैसे त्रावणकोर, मैसूर और पंजाब। आर्थिक सम द्धि तथा पतन का कोई भी अकेला कालानुक्रम उस युग के भारत के हर क्षेत्र के लिए उचित नहीं हो सकता। हालांकि कुछ कमजोरियों तथा अंर्त–विरोधों के बावजूद 18वीं शताब्दी ने क षि के क्षेत्र में अच्छा प्रदर्शन किया। साथ ही अन्तर्देशीय व्यापार तथा शहरीकरण भी फले–फूले। हालांकि उत्तर भारत पंजाब के कुछ हिस्सों में अंतर्राज्यीय संघर्षों की वजह से क षि में पतन की स्थिति आई। भूमि तथा श्रम के अनुभव तथा प्रबंधन ने क षि तरीकों तथा तकनीकों की कमी को पूरा करने में कुछ हद तक सफलता पाई।

'तकसीम' के आंकड़ों का उपयोग कर आइन–ए–अकबरी से तुलना कर देखे तो यह सिद्ध होता है कि यह सिंचाई योग्य भूमि का अभाव नहीं, बल्कि शांति तथा श्रम का अभाव था, जिसके परिणामस्वरूप क षि के क्षेत्र में पतन हुआ तथा क षि मूल्यों में उतार–चढ़ाव के कारण अनिश्चितता आई। इसी समय मूल्य व द्धि ने किसानों को लाभ पहुंचाया, परन्तु यह लाभ समान रूप से नहीं हुआ क्योंकि क षक समाज बंटा हुआ था राज्यों ने क षि के उत्पादों से शुल्क लिए, जबकि गांव खर्चीले विनिमय के व्यापक तंत्र से जुड़े हुए थे।

यह भी उल्लेखनीय है कि 1702 से 1704 के मध्य दक्षिण भारत में संकट के बादल के बावजूद 18वीं शताब्दी के प्रथम सात दशकों में भारत भुखमरी जैसी आपदा से बचा रहा। सन 1770 के बंगाल का भयंकर अकाल, जिसमें लगभग आधी जनसंख्या को अपने प्राण गंवाने पड़े, औपनिवेशिक विजय के तुरंत बाद पड़ा था। इसके तुरंत बाद 1783 में उत्तर भारत ने अकाल की त्रासदी झेली। कुल मिलाकर एक अनुकूल भूमि–श्रम अनुपात ने किसानों को गतिशील बनाया तथा भूमि के नियंत्रकों के साथ जातीय श्रम को समुचित शर्तों पर कार्य दिलाया। किन्तु उत्तर भारत में राजस्व की बढ़ती मांग ने किसानों के पलायन को एक नियंत्रित प्रक्रिया बना दिया। एक तरफ कुछ गांवों के प्रधानों ने राजस्व क षि को अनुवांशिक संपदा बना दिया, वहीं अन्य शक्तिशाली क्षेत्रीय शासकों जैसे कि टीपू सुल्तान (मैसूर) ने अधिक से अधिक राजस्व इक्ट्ठा किया। 18वीं शताब्दी में जनसंख्या, उत्पादन, मूल्य तथा नियत मजदूरी, साधारण रूप से उन्नति पर थी। खंडित राजनीति ने अनाज, वस्त्र तथा पशुओं के सम द्ध अन्तर्देशीय व्यापार के विकास को हानि नहीं पहुंचाई। व्यावसायिक व्यापारिक संस्थाएं वस्तुओं के परिवहन तथा ऋण और बीमा सेवाओं के प्रावधानों के निरीक्षण में राजनीतिक मोर्चेबंदी से आगे निकल गई। पूर्व–औपनिवेशिक युग में कलाकार, मुख्यतः जुलाहों के पास मध्यस्थ सामाजिक समूहों तथा राज्य की ओर से अप्रभावित बढ़ती मांग के द्वारा अपना जीवनयापन करने के लिए अत्यधिक मौके थे। यहां तक कि घुसपैठ करने वाले राज्य जैसे कि 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मैसूर ने भी मध्यस्थों पर ही आक्रमण किए थे, श्रमिकों पर नहीं। बंगाल तथा मद्रास से प्राप्त सबूत इस ओर इशारा करते हैं, कि शहरी श्रमिकों की हालत आरंभिक औपनिवेशिक काल में पूर्व औपनिवेशिक की तुलना में बहुत खराब थे। जबकि अन्तर्देशीय व्यापार प्रगति पर था, वहीं यूरोपीयों के बढ़ते प्रभाव के चलते अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार करने वाले भारतीयों तथा पोतवाहकों को नुकसान हो रहा था। 1720 में महान गुजराती बन्दरगाह सूरत शहर ने अपनी महत्ता खो दी थी। 18वीं शताब्दी के अंत में पश्चिमी तथा दक्षिण पूर्वी एशिया दोनों

में ही भारतीय उत्पादों की भारी मांग उत्पन्न हुई, किन्तु इस समय तक अंग्रेज व्यापारी तथा पोतवाहक अपना वर्चस्व कायम कर चुके थे। अतः भारतीयों को व्यापारिक हानि के साथ अंग्रेजों को अत्यधिक लाभ पहुंचने लगा था।

एक तरफ पुराने व्यावसायिक केंद्रों, जैसे सूरत, मसूलीपट्टनम तथा ढाका नीचे की ओर अग्रसर हुए तो वही बम्बई, मद्रास तथा कलकत्ते जैसे औपनिवेशक बंदरगाह वाले शहर चमक बिखेरने लगे। किन्तु उभरती हुई क्षेत्रीय राजधानियों, जैसे लखनऊ, हैदराबाद तथा विभिन्न मराठा शक्तियों के शहर और सेरिंगपट्टनम ने दिल्ली और आगरा के पतन के असर को समाप्त कर दिया था। 1800 में शहरीकरण का अनुपात पिछले एक सौ वर्षों में स्पष्ट रूप से बढ़ चला था। शहरी केंद्रों में शासन तथा व्यापारियों के मध्य संबंधित सत्ता का संतुलन बदल गया था। कुछ उदाहरणों में तो व्यावसायिक तथा वाणिज्यिक प्रभावशाली शक्तियां राज्य सत्ता का झूठा दावा कर रही थीं।

बहुत से कारणों से भी यह प्रतीत होता है कि 18वीं शताब्दी के मध्य में आर्थिक क्षेत्र में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए। उदाहरण के लिए, जब अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी ने बंगाल सूबे के राजस्व पर अधिकार स्थापित किया तो धन का प्रवाह बहुत बुरी तरह प्रभावित हुआ। पहले बंगाल अपने निर्यात के बदले सोना तथा चांदी पाता था, किन्तु यह तरीका ज्यादा न चल सका। 18वीं शताब्दी के अंतिम हिस्से में किसान नकदी फसलों जैसे कि नील तथा अफीम की खेती करने को बाध्य हुए। इसने अन्न की फसल के उत्पादन का बुरा प्रभाव डाला, किन्तु 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध को 1750 से पूर्व के काल से भिन्न बनाने वाला एक और कारण है, वह है युद्ध का बदलता स्वरूप। 1750 के बाद की अवधि में युद्ध में नागरिक जानमाल, क्षति तथा आर्थिक उत्पादन की क्षति पहले की तुलना में अधिक होने लगी थी तथा इसी समय युद्ध में नई तकनीकियों के उपयोग ने इसे और अधिक खर्चीला कार्य बना दिया था। व्यापक स्तर पर आग्नेय अस्त्रों का उपयोग, किराए के सैनिकों का उपयोग तथा स्थापित सेना का रख–रखाव, इन सभी के बहुत हानिकारक प्रभाव हुए।

15.10 सामाजिक संदर्भ

अठारहवीं शताब्दी में सामाजिक जीवन अपनी पुरानी परिपाटी की ही तरह कायम थी। सामाजिक सांस्क तिक एकता की कुछ विशेषताओं के अतिरिक्त पूरे भारत वर्ष में सामाजिक ढांचे में समानता नहीं थी। समाज, धर्म, क्षेत्र, जाति, भाषा, वर्ग तथा जनजातियों के आधार पर विभिन्न श्रेणियों में बंटा हुआ था। हिन्दू हजारों जातियों के आधार पर विभाजित थे। किसी भी व्यक्ति की जाति जन्म से उसके वंश के अनुसार निर्धारित होती थी। अन्तर्जातीय खान–पान तथा अर्न्तजातीय विवाह प्रतिबंधित थे। परंपरा के अनुसार जाति कर्म से निर्धारित होती थी, किन्तु 18वीं शताब्दी तक आते–आते कुछ हद तक सामाजिक तथा व्यावसायिक गतिशीलता का अनुसरण किया जाने लगा था। उदाहरण के लिए, ब्राह्मणों ने विभिन्न नए क्षेत्रों में पांव पसारना प्रारंभ कर दिया था तथा विभिन्न व्यवसायिक गतिविधियां भी प्रारंभ कर दीं थी।

मुस्लिम भी नस्ल, जाति, जनजाति तथा सामाजिक स्तर के मुद्दों से अछूते न रहे सके। शिया तथा सुन्नी में गंभीर धार्मिक मतभेद थे, जबकि ईरानी, अफगानी तथा

भारत में धर्मान्तरित मुस्लिमों में भी मतभेद थे, जो उन्हें एक–दूसरे से पथक खड़ा करते थे। इस्लाम में धर्मान्तरित हुए व्यक्ति इस्लाम में अपनी जाति के संग आए। समाज की आधार धुरी परिवार था, जो पितसत्तात्मक था सिवाय केरल के जहां मातसत्तात्मक प्रधान समाज था। महिलाओं से आदर्श पुत्री, पत्नी तथा मां बनने की अपेक्षा रखी जाती थी। उत्तर भारत में उच्च कुल की महिलाओं में पर्दे का चलन था। बाल विवाह प्रचलित थे तथा विवाह दो परिवारों के बीच सामाजिक बंधन माना जाता था। उच्च कुलों में बहुपत्नी प्रथा तथा दहेज का प्रचलन था, किन्तु अठारहवीं शताब्दी की सबसे घिनौनी रीति सती प्रथा तथा हिंदुओं के बीच विधवाओं की स्थिति थी।

समय के अनुसार शिक्षा पद्धति में अनुकूल परिवर्तन नहीं हो पाया था। पाठ्यक्रम में साहित्य, भाषा, विधि, धर्म, दर्शन तथा तर्क के विषय तो सम्मिलित थे, किन्तु भौतिकी तथा प्राक तिक विज्ञान, तकनीकी तथा भूगोल का अध्ययन शामिल नहीं था। अध्ययन के सैद्धांतिक तरीकों के वर्चस्व की वजह से प्रगतिशील विचारों का अभाव था। प्रारंभिक शिक्षा का विस्तार व्यापक था। उच्चतर शिक्षा का माध्यम संस्क त तथा फारसी भाषा थी। तथापि महिलाएं तथा जाति के कुलीन व्यक्तियों के लिए शिक्षा का प्रबंध नहीं था।

15.11 सांस्क तिक वातावरण

सामान्य तौर पर यह माना गया कि अठारहवीं शताब्दी में भौतिक जीवन में समान्य पतन हुआ तथा इस समय का सांस्क तिक जीवन भी छिन्न–भिन्न हो गया। हालांकि 18वीं शताब्दी के इस चित्रण के कुछ ही औचित्य हैं। दिल्ली, जिसकी आर्थिक अवस्था डांवाडोल हुई, में भी उस समय महान कवि, दार्शनिक तथा विचारक हुए, शाह वलीउल्लाह से लेकर मीर तकी मीर तक। ज्यों–ज्यों क्षेत्रीय राज दरबारों का महत्त्व बढ़ा, उन्होंने सम द्ध संस्क ति, चाहे वह संगीत, कला या साहित्य हो, को संरक्षण देने के प्रति अपनी रुचि जताई। यह हमें विभिन्न केंद्रों पर अलग–अलग शैली में प्राप्त होती है। अवध से बीकानेर तक तथा लाहौर से तंजौर तक कोई भी व्यक्ति संस्क ति के अस्तित्व को दरबारी परम्परा में देख सकता है। सांस्क तिक परंपराओं के संगम का सर्वाधिक उत्क ष्ट उदाहरण मराठा शासित तंजौर था, जहां तमिल, तेलुगू, संस्क त तथा मराठी भाषा में साहित्यिक रचनाएं हुई, जबकि कुछ मराठा शासकों ने प्रत्यक्ष भूमिका निभाई। इसी प्रकार 18वीं शताब्दी में ही तन्जौर में संगीत का विकास हुआ, जिसे आज भारतीय शास्त्रीय संगीत की कर्नाटक परंपरा बोलते हैं, जिसे त्यागराज, मुत्तूस्वामी दीक्षितर तथा श्याम शास्त्री जैसे महान व्यक्तियों ने स्वर लिपि लिखकर की थी। अंत में इस युग में तंजौर ने चित्रकला की भी कुछ विशिष्ट शैलियों का विकास किया, इनमें उत्तर के कपड़े रंगने की पुराने परंपरा के साथ मिश्रित किया।

यह सौंदर्य केवल शुद्ध रूप से श्रेष्ठ संस्क ति तक ही सीमीत नहीं रहा। यदि शुरूआत करे तो संगीत तथा रंगमंच की परंपराएं तथा इस काल के साहित्य की विभिन्न रूप विधाओं को लोक प्रभाव के साथ समन्वित किया गया। इसी समय लोकप्रिय हिन्दू तथा मुस्लिमों ने तीर्थयात्रा तथा त्यौहार से संबंधित कई सांस्क तिक कड़ियों की शुरूआत की। पहले की शताब्दियों में लंबी दूरी की तीर्थयात्राएं वाराणसी के मुख्य केंद्रों से रामेश्वरम तक बढ़ी। उत्तर मुगल काल में किराए के सैनिक ले जाना तथा लिपिक तथा अधिकारियों को दूसरे स्थान से लाना एक आम बात हो चली थी। उदाहरण के लिए, अठारहवीं शताब्दी में

हैदराबाद में उत्तर भारत से बड़ी संख्या में कायस्थ राजतंत्र में नियुक्त किए गए। मैसूर में 1720 में वित्तीय कार्यालय महाराष्ट्र के ब्राह्मणों को सौंपे गए। प्रतीत होता है कि संगीतज्ञों, लेखकों तथा कलाकारों की गतिशीलता भी प्रचलित थी। जब भी कोई नई राजनीतिक शक्ति उभरती थी, वह प्रतिभाओं को आकर्षित करती थीं। उदाहरण के लिए लाहौर के महाराजा रंजीत सिंह। उच्च श्रेणी का ईरानी साहित्य विकसित हुआ, किन्तु पंजाबी भाषा की कीमत पर नहीं। इसी समय स्थापत्य तथा चित्रकला में भी नए विकास दिखाई देते हैं। सुदूर उत्तर में कांगड़ा में चित्रकला की एक नई शैली का जन्म हुआ, जो मुख्यतः वैष्णव विषय वस्तु से जुड़ी थी। सांस्क तिक माहौल प्रभावों तथा आदर का ही परिणाम था। मुख्य धर्मों में मराठों ने अजमेर में शेख मुईनुद्दीन चिश्ती की दरगाह को सँभाले रखा, वहीं तंजौर के राजा ने नागुर के शेख शाहुल हमीद की दरगाह को आर्थिक सहायता दी। मैसूर में टीपू सुल्तान ने श्रीगंरी मंदिर को वित्तीय मदद की तथा मुस्लिम बड़े प्रसन्नतापूर्वक हिन्दुओं के त्यौहार में भाग लेते थे। उसी प्रकार जिस प्रकार हिन्दू उत्साहपूर्वक मुहर्रम का हिस्सा बनते थे। वास्तव में आश्चर्य है कि आज जिसे भारत की परम्परावादी सभ्यता कहा जाता है, वह उसी काल की तथा उत्तरवर्ती शताब्दी की ही देन है।

15.12 अठारहवीं शताब्दी के भारत के इतिहास को समझने में मतभेद

अठारहवीं शताब्दी की प्रक ति के बारे में विभिन्न इतिहासकारों में मनभेद है चाहे वह मुगल इतिहासकार हो या औपनिवेशक अध्ययन में रुचि रखनेवाले हों। आरंभिक मुगल अध्ययन मुगल साम्राज्य के पतन के द ष्टिकोण से सभी परिवर्तनों को देखता है तथा इस युग को अंधायुग करार देता है। इस प्रकार मुगल राजनीतिक संकट को आर्थिक तथा सामाजिक विफलताओं के साथ देखा जाता है। हालांकि बाद के अध्ययनों ने अठारहवीं शताब्दी की अर्थव्यवस्था तथा समाज को क्षेत्रीय आधार पर अलग कर औपनिवेशिक काल की शुरूआत दिखलाई जिसे अठारहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध कहा गया। इस प्रकार दो स्थितियां 'निरन्तरता बनाम परिवर्तन' के इर्द – गिर्द बहस करती हैं। सामान्यतः भारतीय इतिहासकार औपनिवेशिक विजय को भारतीय इतिहास का प्रस्थान बिन्दु मानते हैं, जो अठारहवीं शताब्दी के मध्य में प्रारंभ हुआ था। अतः अठारहवीं शताब्दी के परिप्रेक्ष्य में दो मुद्दे उभरकर आते हैं, प्रथम कि क्या मुगल साम्राज्य के पतन ने सामाजिक–आर्थिक ढांचे के टूटने की शुरूआत कर दी थी और दूसरा उपनिवेशवाद का आगमन परिस्थिति जन्य था या नहीं?

क्या अठारहवीं शताब्दी को काला युग माना जाए या यह आर्थिक उन्नति का समय था? क्या यह बड़ा अंतराल था या यह निरन्तरता तथा परिवर्तन का युग था? अंग्रेजी सत्ता भारत में किस प्रकार अठारहवीं शताब्दी में फैली? राजनीति, समाज, अर्थव्यवस्था, धर्म तथा संस्क ति की मूल प्रव त्ति से संबंधित ये प्रश्न अठारहवीं शताब्दी के इतिहास के अध्ययन में बहस पैदा करते हैं। पारम्परिक तौर पर इतिहासकार भारत की अठारहवीं शताब्दी को काला युग बतलाते हैं, क्योंकि यह युद्ध, राजनीतिक कोलाहल तथा आर्थिक पतन, स्थिर व सम द्ध मुगलों तथा अधिपत्य शासकों के मध्य फंस गया था। इस द ष्टिकोण को हालांकि नई पीढ़ी के भारतीय इतिहासकारों ने चुनौती दी, जिन्होंने आरंभिक मुगल शासकों तथा उत्तरवर्ती अंग्रेज राज्यों की निरन्तरता पर बल दिया तथा उन छोटे राज्यों

पर चिंता जतलाई, जो मुगल शक्ति के क्षीण होते ही उदय हो गए थे। पूरे भारत को प्रभावित करने वाली राजनीतिक उठापठक किसी को भी यह पूछने को बाध्य कर सकती है कि क्या मुगल साम्राज्य के पतन ने केंद्रीय राजनीतिक शक्ति में एक अंतराल उत्पन्न कर अस्थिरता के चरण को जन्म दिया, जिसमें पहले तो क्षेत्रीय शक्तियों का उदय हुआ तथा बाद में इसने अंग्रेजी औपनिवेशवाद के लिए मार्ग प्रशस्त किया। यहां यह महत्त्वपूर्ण है कि मुगल साम्राज्य के पतन को ही भारतीय समाज के पतन के लिए तथा शताब्दी के पूर्वार्द्ध में केंद्रीय सत्ता के पतन के फलस्वरूप रिक्त स्थान को भरने के लिए अवध तथा बंगाल के नबाव तथा हैदराबाद के निजाम जैसी क्षेत्रीय शक्तियों के उदय के लिए जिम्मेदार माना जाना चाहिए तथापि क्या अंग्रेजी ईस्ट इंडिया कंपनी का आविर्भाव भारतीय समाज, अर्थव्यवस्था तथा राजतंत्र के लिए धक्का था? या अंग्रेजी औपनिवेशवाद के दो सौ वर्षो की भारत में यह शुरूआत थी?

पाठगत प्रश्न 15.4

1. सन 1770 के पश्चात आर्थिक अस्थिरता के कोई दो मुख्य कारण लिखें?

2. यूरोपवासियों की प्रगति के चलते भारतीय निर्यात व्यवसाय पतन को किस प्रकार अग्रसर हुआ?

3. ऐसे औपनिवेशिक शहरों के नाम बताइए, जिन्होंने परम्परागत व्यापारिक केन्द्रों का स्थान लिया?

4. 18वीं शताब्दी की सामाजिक व्यवस्था की कोई दो विशेषताएं लिखें?

5. अठारहवीं शताब्दी की मुख्य सामाजिक कुरीतियों का उल्लेख करें?

6. अठारहवीं शताब्दी तक उच्च शिक्षा के माध्यम की भाषा कौन–सी थी?

7. भारतीय शास्त्रीय संगीत के कर्नाटक परम्परा के उदय के मुख्य केंद्र कौन से थे? इस परंपरा के मुख्य कर्ताधर्ता कौन थे?

आपने क्या सीखा

इस अध्याय में अठारहवीं शताब्दी का चित्रण हैं। यह हमें बाद के मुगल शासकों के बारे में जानकारी देता है, उनकी दुर्बलताओं तथा कठिनाइयों को बतलाता है। यह मुगल सरदारों के उदय तथा अंततः मुगल सत्ता से उनके विद्रोह को भी दर्शाता है।

यह पाठ केंद्रीय सत्ता के विघटन के फलस्वरूप अवध तथा बंगाल के नबाव हैदराबाद के निजाम जैसी क्षेत्रीय शक्तियों के उदय को भी दर्शाता है। क्षेत्रीय शासकों का योगदान एवं उनके आपसी संघर्षों का ब्यौरा भी यह देता है।

मराठा राज्य संघ का आविर्भाव तथा अंततः मराठाओं का पांच वंशों में विघटन भोंसले, गायकवाड़, सिंधिया, होल्कर तथा सतारा में हो जाना इस युग का महत्त्वपूर्ण चरण है। पेशवा की शक्ति तथा अन्य महत्त्वपूर्ण प्रशासनिक विशेषताएं भी दर्शाई गई हैं।

महाराजा रणजीत सिंह के नेतत्व में सिक्खों का संघटन, राजपूत राज्यों का उदय तथा इन राज्यों की भारतीय प्रशासन में राजनीति तथा संस्कति में इनकी देन की संक्षिप्त व्याख्या की गई है।

18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में महत्त्वपूर्ण विकास दिखलाई पड़ते हैं। मैसूर में हैदर अली तथा टीपू सुल्तान का उदय उल्लेखनीय है। ईस्ट इंडिया कंपनी का आगमन तथा मैसूर एवं कंपनी के बीच संघर्ष भारतीय राजनीति में एक नए युग की शुरूआत है।

राजनीतिक विकास के अतिरिक्त इस अध्याय में भारतीय अर्थव्यवस्था की नई विशेषताएं, भारतीय क षि व निर्यात व्यापार के पतन के कारणों पर चर्चा की गई है जिसने औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था का रास्ता साफ कर दिया।

कई मामलों में जहां समाज पुरातनवादी रहा, वहीं 18वीं शताब्दी में भारत ने आर्थिक तथा सांस्क तिक क्षेत्र में नई प्रव त्तियों को जन्म दिया।

18वीं शताब्दी में भारत की राजनीति तथा अर्थव्यवस्था की जटिल प्रव त्ति के चलते इतिहासकारों में इन विकासों को लेकर विभिन्न मत हैं।

पाठान्त प्रश्न

1. औरंगजेब की म त्यु के उपरान्त मुगल वंश का पतन इतनी तेजी से क्यों हुआ?
2. क्षेत्रीय राजनीति तथा राज्यों के उदय की प्रक्रिया का परीक्षण कीजिए? इन शक्तियों की वैधता के लिए शाही प्रतीकों की आवश्यकता क्यों महसूस हुई?
3. मराठों ने 18वीं शताब्दी में किस प्रकार अपनी खोई हुए महत्ता को अर्जित किया?
4. महादजी सिंधिया कौन थे? उनकी मुख्य उपलब्धियों का वर्णन कीजिए?
5. बंगाल के नबावों द्वारा अपनी स्थिति सुद ढ़ करने के लिए किए गए प्रयत्नों का परीक्षण करें?
6. लाहौर में किसने और कब सिक्ख सत्ता की स्थापना की? इस संदर्भ में महाराजा रणजीत सिंह की भूमिका की व्याख्या कीजिए?
7. सवाई राजा जय सिंह द्वारा राजपूताना में शक्ति विस्तार के लिए उठाए गए कदमों की व्याख्या कीजिए?
8. 'दिल्ली के द ष्टिकोण से, 18वीं शताब्दी का युग अंधायुग था'। तर्क देकर इस वक्तव्य के औचित्य को सिद्ध कीजिए?

9. 19वीं शताब्दी में क षि के पतन के कारणों का परीक्षण कीजिए?
10. 18वीं शताब्दी के भारत में आर्थिक क्षेत्र में हुए मुख्य परिवर्तन क्या थे? वर्णन करें?
11. 18वीं शताब्दी की प्रक ति को लेकर विवाद क्यों हैं?
12. किस आधार पर इतिहासकार 18वीं शताब्दी को अंधेरा युग कहते हैं?
13. 18वीं शताब्दी के इतिहास को समझने में मुख्य समस्याएं क्या हैं?

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

15.1

1. बहादुर शाह प्रथम उर्फ शाह आलम। उसने समझौतों की नीति का अनुसरण किया।
2. अब्दुल्ला खान तथा हुसैन अली खान को सैय्यद बंधु के नाम से जाना जाता था। उपलब्धियां–

   क. उन्होंने क्रमशः वजीर और बक्शी की उपाधि धारण की।

   ख. उन्होंने सिक्खों के विद्रोह को दबाया तथा राजपूतों के साथ संधि की।

   ग. उन्होंने जजिया जैसे पक्षपाती कर को हटाया।
3. हैदराबाद राज्य की नींव चिन कीलिच खान उर्फ निजाम–उल–मुल्क ने रखी थी। यह मुगलों के अधीन वजीर था।
4. क. उत्तरवर्ती मुगल शासक दुर्बल तथा अकुशल थे।

   ख. उनमें से अधिकतर अस्थिर बुद्धि के थे तथा विलासिता एवं अपव्यय में संलग्न थे।
5. सन 1738–39 में ईरान के शासक नादिर शाह ने भारत पर आक्रमण किया था।

15.2

1. मराठे
2. मराठा शासक साहू के शासनकाल में मुख्यमंत्री को पेशवा कहा जाता था। बाजी राव प्रथम एक शक्तिशाली पेशवा था, जिसने 1720–1740 तक शासन किया।
3. चौथ तथा सरदेशमुखी से तात्पर्य मराठों द्वारा संगहीत शुल्कों से है। ये शुल्क के अनुपात के अनुसार थे। चौथ जहां 1/4 मुगल कर का था वहीं सरदेशमुखी 1/10 हिस्सा था।
4. गोवा, बसीन, दमन
5. नागपुर के भोसलें, बड़ौदा के गायकवाड़, इन्दौर के हेल्कर, ग्वालियर के सिंधिया तथा सतारा में शिवाजी के उत्तराधिकारी ने सतारा पर शासन किया।
6. अहिल्या बाई इन्दौर के होल्कर शासक मल्हार राव की विधवा बहू थी। उसने 1765 से 1794 तक शासन किया। उसकी मुख्य उपलब्धि थी कि उसने शक्ति को संगठित कर होल्कर वंश की गरिमा में चार चांद लगाएं।

15.3

1. अवध के लखनऊ क्षेत्र में नवाबों के संरक्षण के अधीन न त्य की नई शैली कत्थक का उदय हुआ।
2. इस युद्ध में बंगाल का स्वतंत्र शासक सिराज–उद–दौला अंग्रेजों के हाथों पराजित होने के बाद मारा गया। इस विजय ने अंग्रेजों के लिए बंगाल तथा पूरे भारत में विदेशी शक्ति द्वारा सत्ता स्थापित करने का मार्ग प्रशस्त हुआ।
3. टीपू सुल्तान अंग्रेजों की शत्रुता के साथ–साथ टीपू को हमेशा ही स्थानीय चोरों का भी सामना करना पड़ा।

15.4

1. राजनीतिक खलबली तथा सेनाओं की छापामारी आर्थिक अस्थिरता के दो मुख्य कारण थे।
2. भारतीय उत्पादों की अधिक मांग होने के बावजूद गुजरात के तटीय शहर सूरत ने अपनी महत्ता खो दी। अंग्रेजी व्यापारियों एवं पोतवाहकों ने भारतीयों को हटाकर निर्यात पर अपना अधिकार कर लिया था।
3. बम्बई, मद्रास तथा कलकत्ता जैसे औपनिवेशिक शहरों ने पूर्ववर्ती व्यापार केंद्रों का स्थान ले लिया था।
4. बहुत से क्षेत्रों में 18वीं शताब्दी का सामाजिक जीवन पुरानी परम्परा की ही निरन्तरता थी, जिसमें नाम मात्र के ही परिवर्तन थे। समाज जाति, जनजाति धर्म, भाषा, वर्ग आदि के आधार पर बंटा हुआ था।
5. उच्च वर्ग की महिलाओं के लिए परदा अनिवार्य था। बाल विवाह, बहुपत्नी प्रथा तथा दहेज प्रथा हालांकि समाज में प्रचलित थे, किन्तु सबसे क्रूर व भयंकर सामाजिक बुराई सती प्रथा थी।
6. 18वीं शताब्दी में उच्च शिक्षा का माध्यम संस्क त तथा फारसी था।
7. भारतीय शास्त्रीय संगीत की कर्नाटक शैली का तन्जौर के क्षेत्र में प्रादुर्भाव हुआ। इस परंपरा के मुख्य व्याख्याता थे–त्यागराज, मुत्तूस्वामी दिक्सितार एवं श्याम शास्त्री।

पाठान्त प्रश्नों के संकेत

1. देखें खंड 15.1
2. देखें खंड 15.2
3. देखें 15.3 खंड
4. देखें खंड 15.2, ग्वालियर के सिंधिया
5. देखें खंड 15.4
6. देखें खंड 15.6
7. देखें खंड 15.7

8. देखें खंड 15.9
9. देखें खंड 15.9
10. देखें खंड 15.9
11. देखें खंड 15.12
12. देखें खंड 15.12
13. देखें खंड 15.12